

फालसा: स्वास्थ्यवर्धक एवं आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण फल

केएम रुमा, दुष्यन्त, आदर्श कुमार मीणा एवं शिखा कुमारी
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ

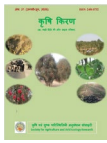
फालसा भारत मूल का एक झाड़ीदार पौधा या छोटा वृक्ष है। इसका उपयोग वैदिक काल से किया जाता रहा है। इसके पके हुए फल गर्मियों में ताजे रूप में खाए जाते हैं तथा इनसे स्वादिष्ट और ताजगी देने वाले फलों के पेय एवं शीतल पेय भी बनाए जाते हैं। फालसा फल का भंडारण जीवन बहुत कम होता है, इसलिए यह मुख्यतः स्थानीय बाजारों तक ही सीमित रहता है। भारत में इसकी व्यावसायिक खेती मुख्य रूप से उत्तरी और पश्चिमी राज्यों में की जाती है। फालसा को भारत की विभिन्न भाषाओं में अलग-अलग नामों से जाना जाता है। हिंदी में इसे फालसा, धमिन, परुषा और शुकरी कहा जाता है। पंजाबी में इसे धमन, असमिया में मान-बिजाल, बंगाली में फालसा और शुकरी, उड़िया में मिरगी चारा और फरासाकोली, गुजराती में फालसा, मराठी में फालसी, तेलुगु में जना, नल्लाजना और फुटिकी, तमिल में पालिसा और तड़ाची तथा कन्नड़ में बुट्टियुडिप्पे और तड़ासला कहा जाता है।

क्षेत्रफल एवं वितरण

फालसा भारत के कई राज्यों में प्राकृतिक रूप से उगता हुआ पाया जाता है। यह उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा दक्षिण भारत के अनेक

भागों में जंगली रूप में मिलता है। फालसा की खेती भारत में बहुत छोटे स्तर पर की जाती है और इसकी व्यावसायिक खेती मुख्य रूप से पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश में सीमित है। इसके अधिकांश व्यावसायिक बाग बड़े शहरों के आसपास स्थित हैं, ताकि फलों को जल्दी बाजार तक पहुँचाया जा सके। देश में फालसा का कुल क्षेत्रफल 1000 हेक्टेयर से भी कम माना जाता है। इस फसल की लोकप्रियता सीमित रहने के कई कारण हैं, जैसे फलों का छोटा आकार, लंबे समय तक पकने की प्रक्रिया, बार-बार तुड़ाई की आवश्यकता तथा फलों का अत्यधिक नाशवान होना। इसकी खेती अधिकतर किसान छोटे स्तर पर करते हैं।





पोषक तत्व संरचना

फालसा के फलों में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा अधिक पाई जाती है, जो लगभग 6-8 से 25-28 प्रतिशत तक होती है। इसके फलों में शर्करा एवं अम्ल की मात्रा 0-4 से 2-5 प्रतिशत तक पाई जाती है, जबकि प्रोटीन और वसा की मात्रा बहुत कम होती है। फालसा फल में मुख्य अम्ल साइट्रिक अम्ल होता है तथा थोड़ी मात्रा में मैलिक अम्ल भी पाया जाता है। यह फल विटामिन और खनिज तत्वों का अच्छा स्रोत माना जाता है। फालसा में विटामिन ए की मात्रा अधिक होती है तथा इसमें उच्च एंटीऑक्सीडेंट क्षमता पाई जाती है। इसके फल फ्लेवोनॉयड्स, कैरोटेनॉयड्स और एंथोसायनिन जैसे महत्वपूर्ण जैव सक्रिय तत्वों से भरपूर होते हैं। फ्लेवोनॉयड्स में एंटीऑक्सीडेंट गुण पाए जाते हैं, जबकि एंथोसायनिन हृदय रोगों के खतरे को कम करने में सहायक होते हैं, क्योंकि ये शरीर में कोलेस्ट्रॉल बनने की प्रक्रिया को रोकने में मदद करते हैं। फालसा के फल पोटैशियम से भी समृद्ध होते हैं, जो ऊर्जा उपापचय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा रक्तचाप को सामान्य बनाए रखने में सहायक होता है।

औषधीय महत्व

फालसा का उपयोग वैदिक काल से विभिन्न औषधियों में किया जाता रहा है। इसके पके हुए फल शरीर को ठंडक प्रदान करते हैं तथा इनमें टॉनिक और कामोत्तेजक गुण पाए जाते हैं। फालसा के फल प्यास और शरीर में होने

वाली जलन को शांत करने में सहायक होते हैं तथा सूजन को कम करने और ठीक करने में उपयोगी माने जाते हैं। यह फल हृदय और रक्त संबंधी विकारों, बुखार तथा दस्त जैसी समस्याओं में लाभकारी माना जाता है। फालसा गले की समस्याओं में भी उपयोगी होता है। पारंपरिक चिकित्सा में इसका उपयोग मृत भ्रूण को बाहर निकालने में भी किया जाता रहा है। फालसा के कच्चे फल और इसकी छाल पित्त, वात और कफ संबंधी विकारों को दूर करने में सहायक मानी जाती है। यह मूत्र संबंधी समस्याओं तथा प्रजनन तंत्र में होने वाली जलन को कम करने में भी उपयोगी है। इसकी छाल का काढ़ा श्लेष्मा को शांत करने वाले औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। फालसा की जड़ का उपयोग मूत्र रुकावट, सूजाक और गोनोरिया जैसी बीमारियों में किया जाता है। संथाल जनजाति के लोग इसकी जड़ की छाल का उपयोग गठिया रोग के उपचार में करते हैं। इसकी पत्तियों का उपयोग फोड़े-फुंसियों और त्वचा पर होने वाले दानों पर लेप के रूप में किया जाता है। कुछ वैद्य फालसा की कलियों को भी विभिन्न रोगों के उपचार के लिए उपयोग में लाते हैं। छोटे स्तनधारी जीवों पर किए गए प्रयोगों में यह पाया गया है कि फालसा गामा विकिरण के हानिकारक प्रभावों से सुरक्षा प्रदान करने में सहायक हो सकता है।

फालसा फलों का पोषण मूल्य

पोषक तत्व	100 ग्राम खाद्य भाग में पोषक तत्व की मात्रा
नमी (%)	80.8
कार्बोहाइड्रेट (%)	21.1
प्रोटीन (%)	1.5
वसा (%)	0.9
रेशा (%)	1.2
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	129
फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	39
पोटैशियम (मि.ग्रा.)	375
आयरन (मि.ग्रा.)	3.1
विटामिन B3 (मि.ग्रा.)	0.3
विटामिन C (मि.ग्रा.)	22
विटामिन A (कैरोटीन) (माइक्रोग्राम)	419

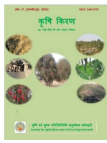


अन्य उपयोग

फालसा के ताजे पत्तों का उपयोग पशुओं के चारे के रूप में किया जाता है। इसकी छाल का प्रयोग कुछ क्षेत्रों में साबुन के विकल्प के रूप में भी किया जाता है। फालसा की छाल से प्राप्त चिपचिपे अर्क का उपयोग चीनी और गुड़ को साफ करने के लिए किया जाता है। इसकी छाल से प्राप्त रेशों का उपयोग रस्सी बनाने में किया जाता है। फालसा की लकड़ी पीले-सफेद रंग की, महीन बनावट वाली, मजबूत तथा लचीली होती है। इसकी कटाई-छंटाई से प्राप्त शाखाओं का उपयोग टोकरी बनाने, पौधों को सहारा देने वाली लकड़ियों तथा ईंधन के रूप में किया जाता है। फालसा के फूलों में “ग्रेविनॉल” नामक लंबी श्रृंखला वाला कीटो एल्कोहल पाया जाता है। इसके बीजों में लगभग 5 प्रतिशत तेल पाया जाता है, जो चमकीले पीले रंग का होता है। इस तेल में लगभग 65 प्रतिशत लिनोलिक अम्ल, 13-15 प्रतिशत ओलिक अम्ल तथा 11 प्रतिशत स्टीयरिक अम्ल पाया जाता है।

वानस्पतिक विवरण

फालसा टिलिएसी कुल का पौधा है। इसका वानस्पतिक नाम *ग्रेविया सबइनइक्वालिस* है, जिसे पहले *ग्रेविया एशियाटिका* के नाम से जाना जाता था। फालसा का निकटतम संबंधी *ग्रेविया इलास्टिका वेरायटी वास्टिटा*, जो सामान्यतः छोटे पहाड़ी क्षेत्रों और घाटियों में पाया जाता है। इन दोनों प्रजातियों के अतिरिक्त *ग्रेविया* वंश में लगभग 140 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें प्रमुख प्रजातियाँ *ग्रेविया ग्लाब्रा*, *ग्रेविया माइक्रोकोस*, *ग्रेविया ऑप्टिवा*, *ग्रेविया टिलिफोलिया* तथा *ग्रेविया बेलोसा* हैं। फालसा का पौधा मध्यम आकार की झुकी हुई झाड़ी होता है, जो बिना छंटाई के लगभग 4 मीटर तक ऊँचा हो सकता है। इसका तना धूसर रंग का तथा खुरदरी छाल वाला होता है। पौधे में कई लंबी, पतली और झुकी हुई शाखाएँ होती हैं। नई शाखाएँ घने बालों से ढकी रहती हैं। इसकी पत्तियाँ एकांतर, सरल तथा चौड़े हृदयाकार से अंडाकार आकार की होती हैं, जिनका अग्र भाग नुकीला होता है। पत्तियाँ लगभग 20 सेमी लंबी और 15 सेमी चौड़ी होती हैं तथा इनके किनारे मोटे दाँतेदार होते हैं। पत्ती का डंठल लगभग 1-2 सेमी लंबा होता है। फालसा में पुष्प क्रम अक्षीय साइम प्रकार का होता है, जिसमें 3 से 5 फूल होते हैं और ये 2 से 8 के समूहों में पाए जाते हैं। इनकी लंबाई लगभग 16 से 25 सेमी होती है। पुष्पासन 3 से 4 मिमी लंबा होता है तथा इसका ऊपरी भाग रोयेंदार होता



है। फूल छोटे, लगभग 1 से 2 सेमी व्यास वाले तथा चमकीले नारंगी-पीले रंग के होते हैं। इसमें पाँच आयताकार, चिकने बाह्यदल होते हैं, जिनकी लंबाई लगभग 1-5 सेमी होती है। पुष्पदल भी पाँच होते हैं तथा नारंगी-पीले रंग के होते हैं। फालसा के फल बहुत छोटे होते हैं और पकने पर बैंगनी से गहरे लाल रंग के दिखाई देते हैं। फलों का डंठल लगभग 2 से 3 सेमी लंबा होता है तथा फल गुच्छों में लगते हैं। वानस्पतिक दृष्टि से इसका फल रूपाकार का होता है। फल लगभग 1 से 2 सेमी व्यास तथा 1 से 2 सेमी लंबाई के होते हैं और उनका औसत भार 1 से 2 ग्राम तक होता है। फूल आने के लगभग 45 से 55 दिन बाद फल पकते हैं। एक ही गुच्छे के सभी फल एक साथ नहीं पकते। पकने के समय फल हल्के हरे रंग से चेरी लाल या बैंगनी-लाल तथा अंत में गहरे बैंगनी रंग के हो जाते हैं। पके हुए फल पर हल्की सफेद परत होती है तथा वे मुलायम और कोमल हो जाते हैं। फल का गूदा हल्के हरे-सफेद रंग का होता है, जो छिलके के पास बैंगनी-लाल दिखाई देता है। इसका स्वाद मीठा-खट्टा तथा हल्की सुखद सुगंध वाला होता है। सामान्यतः प्रत्येक फल में एक बीज पाया जाता है, जो अर्धगोलाकार तथा 5-7 मिमी आकार का होता है।

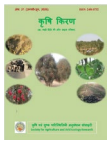
जलवायु

फालसा एक उपोष्णकटिबंधीय फल पौधा है, लेकिन इसे उँचाई वाले क्षेत्रों को छोड़कर विभिन्न प्रकार की जलवायु परिस्थितियों में

उगाया जा सकता है। यह पौधा समुद्र तल से लगभग 1000 मीटर की उँचाई तक सफलतापूर्वक बढ़ सकता है। फालसा उन क्षेत्रों में अच्छी वृद्धि करता है जहाँ ग्रीष्म और शीत ऋतु स्पष्ट रूप से पाई जाती हैं। यह एक पतझड़ी पौधा है, जो सामान्यतः शीत ऋतु के आरंभ में अपनी पत्तियाँ गिरा देता है और सुप्तावस्था में चला जाता है। हालांकि, गर्म क्षेत्रों में पौधे की पत्तियाँ नहीं झड़तीं तथा उसमें सुप्तावस्था नहीं आती। फालसा का पौधा लगभग 3° से 45° तापमान तक सहन कर सकता है। यह हल्के पाले को भी सहन करने में सक्षम होता है, लेकिन अत्यधिक कम तापमान से इसकी सुरक्षा आवश्यक होती है। फलों के उचित पकने, आकर्षक रंग विकसित होने तथा अच्छे स्वाद और गुणवत्ता के लिए पर्याप्त धूप और गर्म या अधिक तापमान की आवश्यकता होती है।

मृदा

फालसा का पौधा विभिन्न प्रकार की मिट्टियों जैसे महीन रेतीली, चिकनी तथा चूना युक्त मिट्टी में भी अच्छी वृद्धि और संतोषजनक उत्पादन देने में सक्षम होता है। हालांकि, इसकी अच्छी वृद्धि और अधिक उत्पादन के लिए दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है। फालसा की खेती के लिए मृदा का उपयुक्त पीएच मान 6-1 से 5-6 के बीच होना चाहिए। सामान्यतः फालसा को शहरों के निकट स्थित सीमांत भूमि में उगाया जाता है, ताकि फलों को जल्दी बाजार तक पहुँचाया जा सके।



लेकिन अच्छी जल निकास वाली उपजाऊ दोमट मिट्टी में इसकी खेती करने पर अधिक उत्पादन तथा उच्च गुणवत्ता वाले फल प्राप्त होते हैं।

किस्में

फालसा की कोई मान्यता प्राप्त उन्नत किस्म उपलब्ध नहीं है, लेकिन विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय रूप से पसंद की जाने वाली किस्में उगाई जाती हैं। फालसा की दो स्थानीय किस्में, अर्थात् लंबी (टॉल) और छोटी (इवार्फ) किस्में प्रचलित हैं। इनमें बौनी या छोटी किस्म लंबी किस्म की तुलना में अधिक उत्पादक मानी जाती है। बौनी किस्म के फलों में कुल शर्करा तथा गैर-अपचायक शर्करा की मात्रा अधिक पाई जाती है, जबकि लंबी किस्म में अपचायक शर्करा की मात्रा अधिक होती है।

प्रवर्धन

फालसा का प्रवर्धन विभिन्न विधियों जैसे बीज, कलम, ग्राफ्टिंग तथा लेयरिंग द्वारा किया जा सकता है, लेकिन बीज द्वारा प्रवर्धन अभी भी सबसे अधिक प्रचलित और लोकप्रिय विधि है।

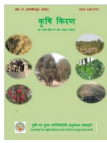
बीज द्वारा प्रवर्धन

फालसा का मुख्य रूप से प्रवर्धन बीजों द्वारा किया जाता है। बीज पके हुए फलों से निकाले जाते हैं। इसके बीज बहुत छोटे होते हैं, जिनका आकार लगभग 5 मिमी व्यास तथा भार लगभग 0.5 से 0.75 ग्राम होता है। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए पौध तैयार करने हेतु लगभग 1 से 2 किलोग्राम बीज की

आवश्यकता होती है। सामान्य तापमान पर बीज की जीवित रहने की क्षमता लगभग 90 से 100 दिनों तक रहती है, जबकि शीत भंडारण में इन्हें लगभग 6 माह तक सुरक्षित रखा जा सकता है। बीजों की बुवाई सामान्यतः जुलाई माह में की जाती है। बीजों को उठी हुई क्यारियों में पंक्तियों में बोया जाता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी लगभग 30 से 45 सेमी रखी जाती है। ताजे बीजों का अंकुरण सामान्यतः अच्छा होता है तथा बीज 15 से 20 दिनों में अंकुरित हो जाते हैं। लगभग 7 से 8 माह पुराने पौधों को खेत में रोपित किया जाता है। रोपण के लगभग 15 से 18 माह बाद पौधों में अच्छी तरह विकसित फलों की पहली फसल प्राप्त होने लगती है।

कलम द्वारा प्रवर्धन

फालसा का पौधा कठोर लकड़ी की कलमों द्वारा आसानी से प्रवर्धित किया जा सकता है। कलमों में जड़ बनने की क्षमता लकड़ी के प्रकार तथा रोपण समय पर निर्भर करती है। इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल के 100 पीपीएम घोल में 24 घंटे तक उपचारित करने पर कलमों में अच्छी जड़ वृद्धि प्राप्त होती है। कठोर लकड़ी की कलमों में लगभग 60 से 68 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त की जा सकती है। फालसा की कठिनाई से जड़ बनाने वाली कलमों में ऑक्सिन वर्ग के वृद्धि नियंत्रकों जैसे इंडोल एसिटिक अम्ल, इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल तथा नेफथलीन एसिटिक अम्ल के प्रयोग से जड़ निर्माण में सुधार होता है। कठोर तथा कोमल



लकड़ी की कलमों को इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल या इंडोल एसिटिक अम्ल की कम सांद्रता वाले घोल में 24 घंटे तक डुबोकर रखने से अधिक जड़ निर्माण देखा गया है। इसके अतिरिक्त, कलमों को इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल, इंडोल एसिटिक अम्ल अथवा इनके मिश्रण की अधिक सांद्रता (1000 से 10000 पीपीएम) वाले घोल में 5 मिनट से 2 घंटे तक डुबोने की त्वरित विधि भी जड़ बनने को प्रोत्साहित करती है। अर्ध-कठोर लकड़ी की कलमों को जैव उर्वरकों युक्त माध्यम में लगाने पर लगभग 10 से 20 प्रतिशत तक जड़ निर्माण प्राप्त किया गया है।

लेयरिंग द्वारा प्रवर्धन

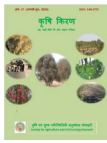
फालसा का प्रवर्धन लेयरिंग विधि द्वारा भी किया जाता है। ग्राउंड लेयरिंग तथा एयर लेयरिंग में ऑक्सिजन वर्ग के वृद्धि नियंत्रकों जैसे इंडोल एसिटिक अम्ल, इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल तथा नेफथलीन एसिटिक अम्ल के प्रयोग से जड़ निर्माण में सुधार होता है। फालसा की एयर लेयरिंग में इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल तथा नेफथलीन एसिटिक तथा 4-डाइक्लोरोफिनॉक्सी एसिटिक अम्ल के प्रयोग से अधिक सफलता प्राप्त की गई है। विभिन्न उपचारों में सफलता की दर अलग-अलग पाई गई, लेकिन इंडोल ब्यूट्रिक अम्ल और नेफथलीन एसिटिक अम्ल की अधिक सांद्रता तथा उनके मिश्रण से कम सांद्रता और बिना उपचार की तुलना में अधिक सफलता प्राप्त हुई।

ग्राफ्टिंग द्वारा प्रवर्धन

फालसा में सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग विधि भी सफल पाई गई है। ग्राफ्टिंग से एक से दो सप्ताह पहले सायन की पत्तियाँ हटाने से ग्राफ्ट की सफलता दर में वृद्धि देखी गई है।

रोपण

फालसा के पौधों को सामान्यतः 2-5 से 4 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है और एक हेक्टेयर क्षेत्र में लगभग 1000 से 1500 पौधे लगाए जा सकते हैं। उच्च घनत्व रोपण से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। युग्म पंक्ति (पेयर रो) पद्धति में 60 सेमी की दूरी पर दो पंक्तियाँ तथा प्रत्येक युग्म पंक्ति के बीच 3 मीटर की दूरी रखने से भी अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। फालसा प्रायः सीमांत भूमि में उगाया जाता है, इसलिए रोपण के लिए 60 × 60 × 60 सेमी आकार के गड्ढे तैयार किए जाते हैं। इन गड्ढों को मिट्टी और गोबर की सड़ी हुई खाद के मिश्रण से भर दिया जाता है। रोपण के लिए सामान्यतः 8 से 12 माह पुराने पौधों का उपयोग किया जाता है। फालसा का रोपण जुलाई-दृगस्त या फरवरी माह में किया जा सकता है। जिन क्षेत्रों में सर्दियों के दौरान फालसा के पौधे पत्तियाँ गिराकर सुप्तावस्था में चले जाते हैं, वहाँ फरवरी का महीना रोपण के लिए सबसे उपयुक्त माना जाता है। जबकि जिन क्षेत्रों में सर्दी बहुत कम होती है या नहीं होती, वहाँ फालसा के पौधे पत्तियाँ नहीं गिराते, इसलिए



वर्षा ऋतु अर्थात् जुलाई-दिसंबर का समय रोपण के लिए सबसे अच्छा माना जाता है।

पोषण प्रबंधन

फालसा को एक सहनशील फसल माना जाता है और इसे सामान्यतः कम देखभाल वाली परिस्थितियों में भी उगाया जाता है। फालसा के पौधे नाइट्रोजन उर्वरक के प्रति अच्छा प्रतिसाद देते हैं। फॉस्फोरस की अधिक मात्रा फलों में शर्करा की मात्रा बढ़ाने में सहायक होती है, जबकि अधिक पोटाश शर्करा की मात्रा को कम करके अम्लता को बढ़ावा देता है। अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए प्रति पौधा लगभग 100 ग्राम नाइट्रोजन पर्याप्त माना जाता है। अधिक उत्पादन हेतु प्रत्येक पौधे को 15 किलोग्राम गोबर की सड़ी हुई खाद तथा लगभग 125 ग्राम नाइट्रोजन देना लाभकारी पाया गया है। अधिक उपज प्राप्त करने के लिए प्रति हेक्टेयर लगभग 100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 25 किलोग्राम पोटाश देने की सिफारिश की जाती है। सामान्यतः प्रति पौधा 100 ग्राम नाइट्रोजन, 40 ग्राम फॉस्फोरस तथा 40 ग्राम पोटाश देना उपयुक्त माना जाता है। उर्वरक एवं खाद देने का सबसे अच्छा समय फरवरी माह में पौधों की छंटाई के बाद होता है। मुख्य पोषक तत्वों के अतिरिक्त फालसा के पौधों को सूक्ष्म पोषक तत्वों की भी आवश्यकता होती है। यह पौधा लौह तत्व की कमी के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होता है। जिंक सल्फेट (0-5 प्रतिशत) तथा फेरस सल्फेट (0-4

प्रतिशत) के छिड़काव से पौधों की वृद्धि तथा फल गुणवत्ता में सुधार देखा गया है। फल बनने के समय नाइट्रोजन और पोटाश का पर्णीय छिड़काव करने से फलों की उपज और गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

सिंचाई

फालसा एक सूखा सहनशील पौधा है, इसलिए इसे बार-बार सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। फिर भी, फल बनने और फल विकास की अवस्था में सिंचाई करने से फलों की उपज और गुणवत्ता में वृद्धि होती है। सामान्यतः उर्वरक देने के बाद एक सिंचाई करने की सलाह दी जाती है। इसके बाद बेहतर उत्पादन और फल गुणवत्ता के लिए फल वृद्धि एवं विकास अवधि के दौरान 15 से 20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

छंटाई

फालसा में छंटाई एक अत्यंत महत्वपूर्ण क्रिया है। यह पाया गया है कि लंबे और जंगली प्रकार के फालसा पौधों में उत्पन्न फल सामान्य गुणवत्ता के होते हैं तथा अधिकांश उपभोक्ताओं द्वारा अधिक पसंद नहीं किए जाते। इसके विपरीत, छोटे कद वाले बौने अथवा झाड़ीदार प्रकार के पौधों के फलों में शर्करा और अम्ल का संतुलित मिश्रण पाया जाता है, इसलिए इन्हें खेती के लिए अधिक उपयुक्त माना जाता है। फालसा में फल वर्तमान मौसम की नई वृद्धि पर लगते हैं, इसलिए अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए प्रतिवर्ष नियमित छंटाई आवश्यक होती है।

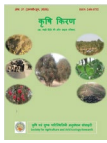


छंटाई द्वारा पुरानी शाखाओं को हटाकर नई वृद्धि को प्रोत्साहित किया जाता है। लगभग 1 मीटर ऊँचाई तक की गई वार्षिक छंटाई से नई शाखाओं का विकास अच्छा होता है तथा बाजार योग्य फलों की अधिक उपज प्राप्त होती है। विभिन्न प्रयोगों से यह पाया गया है कि 100 सेमी ऊँचाई तक की गई छंटाई से पौधों में अधिक फल गुच्छे तथा अधिक उपज प्राप्त होती है। कुछ क्षेत्रों में 50 सेमी तक की छंटाई को भी उपज की दृष्टि से लाभकारी पाया गया है, जबकि अन्य परिस्थितियों में भूमि सतह से 75 सेमी ऊँचाई तक की गई छंटाई से सर्वोत्तम उपज प्राप्त हुई। समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि शीत ऋतु में भूमि से 75 से 100 सेमी ऊँचाई तक की गई छंटाई फलों की उपज और गुणवत्ता दोनों में सुधार करती है। उपज और गुणवत्ता बढ़ाने के अतिरिक्त नियमित छंटाई से पौधे का आकार नियंत्रित रहता है, फलन क्षेत्र पौधे की पहुँच में बना रहता है तथा फल तुड़ाई का कार्य भी आसान हो जाता है।

पुष्पन एवं फल विकास

फालसा का पौधा रोपण के लगभग 15 से 18 माह बाद फल देना प्रारंभ कर देता है, लेकिन अच्छी उपज सामान्यतः रोपण के तीन वर्ष बाद प्राप्त होती है। इसमें फूल आने की प्रक्रिया फरवरी-दृमार्च माह में शुरू होती है और लगभग एक महीने तक चलती है। इसके फूल छोटे तथा पीले रंग के होते हैं। यद्यपि फालसा के फूल उभयलिंगी होते हैं, फिर भी अच्छे फल

सेट के लिए पर-परागण आवश्यक माना जाता है। खुले परागण की स्थिति में फल सेट अधिक पाया गया है, जबकि स्व-परागण में फल सेट अपेक्षाकृत कम होता है। फालसा के लंबे तथा बौने दोनों प्रकारों में फल सेट में विशेष अंतर नहीं पाया गया। फालसा में मुख्य परागण करने वाले कीटों में मधुमक्खियों की विभिन्न प्रजातियाँ प्रमुख होती हैं, जो फूलों से पराग एवं मधुरस एकत्र करती हैं। यह पाया गया है कि पौध वृद्धि नियंत्रकों के प्रयोग से फलों के आकार और उपज में वृद्धि होती है। 2-4-डाइक्लोरोफिनॉक्सी एसिटिक अम्ल के 2-5 पीपीएम घोल का फूल आने के समय तथा फूल आने के 8 दिन बाद दो बार छिड़काव करने से उपज में लगभग 74 प्रतिशत तक वृद्धि देखी गई है। इसी प्रकार 60 पीपीएम जिबरेलिक अम्ल तथा 5 पीपीएम 2-4-5-ट्राइक्लोरोफिनॉक्सी एसिटिक अम्ल के छिड़काव से भी उपज में लगभग 64 प्रतिशत तक वृद्धि प्राप्त हुई है। इन छिड़कावों से फलों की तुड़ाई का समय भी कम हो जाता है। जिबरेलिक अम्ल के प्रयोग से फल सेट में सुधार तथा फलों के आकार में वृद्धि पाई गई है। जिबरेलिन 5 और 10 पीपीएम घोल के बाह्य प्रयोग से फलों में कुल घुलनशील ठोस पदार्थ, घुलनशील ठोस पदार्थ ध्वंस्ल अनुपात तथा कुल शर्करा की मात्रा में वृद्धि होती है। फूलों अथवा पुष्पगुच्छों की 50 प्रतिशत छंटाई के बाद जिबरेलिन 7.10 के 20 पीपीएम घोल



का छिड़काव करने से फलों का भार और आकार उल्लेखनीय रूप से बढ़ जाता है।

तुड़ाई एवं उपज

फालसा के फल फूल आने के लगभग 40 से 55 दिनों बाद पक जाते हैं। फलों की तुड़ाई अप्रैल और मई माह में की जाती है, जब उनका रंग हरे से बदलकर गहरा लाल (क्रिमसन रेड) हो जाता है। दूर के बाजारों में भेजने के लिए हल्के गहरे लाल रंग के परिपक्व फलों की तुड़ाई की जाती है, जबकि स्थानीय बाजारों के लिए पूरी तरह पके हुए गहरे बैंगनी रंग के फल तोड़े जाते हैं। फालसा के फल आकार में बहुत छोटे होते हैं तथा एक ही गुच्छे के सभी फल एक साथ नहीं पकते, इसलिए तुड़ाई हाथों से की जाती है। फलों के धीरे-धीरे और लगातार पकने के कारण तुड़ाई लगभग एक महीने तक चलती रहती है तथा एक दिन के अंतराल पर कई बार करनी पड़ती है। सामान्यतः एक पौधे से लगभग 5 से 10 किलोग्राम फल प्राप्त होते हैं।

कटाई उपरांत प्रबंधन एवं मूल्य संवर्धन

फालसा के फल अत्यधिक नाशवान होते हैं, इसलिए इन्हें तुड़ाई के एक या दो दिनों के भीतर ही बाजार में बेच देना या उपयोग कर लेना आवश्यक होता है। परिपक्व फलों को लगभग 48 घंटे तक तथा पूरी तरह पके हुए फलों को लगभग 24 घंटे तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इसके बाद फलों का रंग गहरा लाल हो जाता है, फल मुलायम और ढीले पड़ जाते हैं तथा किण्वन के कारण उनका स्वाद

कड़वा हो जाता है। कम भंडारण क्षमता के कारण फालसा के फल सामान्यतः स्थानीय बाजारों में ही बेचे जाते हैं। कुछ क्षेत्रों में अधिकांश उत्पादक फसल को पकने से पहले ही ठेकेदारों को बेच देते हैं, जिससे किसानों को खुदरा मूल्य का बहुत कम हिस्सा प्राप्त होता है। फालसा का उपयोग मुख्य रूप से फालसा जूस (शरबत) तथा फालसा स्कवैश बनाने में किया जाता है। फालसा का रस बहुत तेजी से किण्वित हो जाता है, इसलिए लंबे समय तक सुरक्षित रखने के लिए इसमें सोडियम बेंजोएट जैसे संरक्षक पदार्थ का उपयोग किया जाता है।

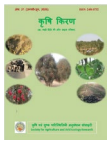
रोग एवं कीट

पत्ती धब्बा रोग

यह रोग वर्षा ऋतु में अधिक पाया जाता है। यह *सर्कोस्पोरा ग्रैविए* नामक कवक के कारण होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों के दोनों ओर छोटे काले धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे पूरी पत्ती पर सफेद रंग का पदार्थ फैल जाता है, जिससे पत्तियाँ समय से पहले झड़ने लगती हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए कड-45 के 0-3 प्रतिशत घोल का छिड़काव प्रभावी माना जाता है।

रतुआ रोग

यह रोग *डैस्टुरेला ग्रैविए* नामक कवक के कारण होता है। रोग के प्रभाव से पत्तियों की निचली सतह पर हल्के भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं, जिसके कारण पत्तियाँ झड़ने लगती हैं। इस रोग के नियंत्रण हेतु कड-45 (0-3



प्रतिशत) तथा सल्फेक्स (0-2 प्रतिशत) का 15 दिनों के अंतराल पर बारी-बारी से छिड़काव करना लाभकारी होता है।

कीट

पत्ती काटने वाली इल्ली

यह कीट पत्तियों को भारी नुकसान पहुँचाता है। इसकी पूर्ण विकसित इल्ली लाल-भूरे रंग की होती है तथा इसका सिर गहरे रंग का होता है। यह पौधों पर ही प्यूपा अवस्था में रहती है। यह कीट प्रायः रात के समय पौधों पर आक्रमण करता है और अधिक प्रकोप होने पर पूरा पौधा पत्तियों से रहित हो सकता है। इसके नियंत्रण के लिए कार्बारिल 0-3 प्रतिशत का धूल छिड़काव अथवा एंडोसल्फान 0-3 प्रतिशत का स्प्रे प्रभावी होता है।

छाल खाने वाली इल्ली

यह कीट मुख्यतः उपेक्षित बागों में पाया जाता है। यह पेड़ों के तनों और शाखाओं में सुरंग बनाकर रहता है तथा रात के समय छाल को खाता है। प्रभावित पौधों की वृद्धि रुक जाती है और उत्पादन कम हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए छंटाई के समय मोनोक्रोटोफॉस (0-1 प्रतिशत) अथवा कार्बारिल (0-4 प्रतिशत) मिश्रित पेंट का प्रयोग किया जाता है।

मिली बग

आम का मिली बग फालसा के पौधों को गंभीर नुकसान पहुँचाता है। इस कीट के प्रकोप से फल सेट पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस या डायजिनॉन के 0-4 प्रतिशत घोल का छिड़काव प्रभावी माना जाता है।